International Journal of Trend in Scientific Research and Development (IJTSRD)
Volume 6 Issue 5, July-August 2022 Available Online: www.ijtsrd.com e-ISSN: 2456 – 6470

भारत में π का क्रमिक विकास

दिनेश मोहन जोशी[1], गिरीशभट्ट बि[2]

[1]मानविकी एवं समाज विज्ञान विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुम्बई
[2]सिद्धान्तज्यौतिषशास्त्र में विद्यावारिधिशोधच्छात्र राष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालय, तिरुपति

सार

जब हमें यह पूछा जाता है कि विद्यालय में गणित में आपने क्या सीखा तो अक्सर हमारे मस्तिष्क में $2\pi r$, πr^2 इत्यादि सूत्र आ जाते हैं । इन सूत्रों में π क्या है इसपर कोई चर्चा नहीं होती मात्र π के मान $\frac{22}{7}$ अथवा 3.14 बता दिये जाते हैं । π ग्रीक भाषा का सोलहवां अक्षर है । गणित के क्षेत्र में इसके प्रयोग से इसको अधिक प्रसिद्धि मिली । π एक एसी अवर्णित समस्या है जिसका वर्णन करने का प्रयास कई शताब्दियों से चला आ रहा है । π ने विश्व के असङ्ख्य गणितज्ञों का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित किया है यही कारण है कि π सम्बन्धी शोध कभी रुका नहीं है । प्रस्तुत शोधपत्र में हम भारतीय परिपेक्ष्य में π के क्रमिक विकास पर चर्चा करेंगे ।

कूटशब्द - व्यास, परिधि, शुल्बसूत्र, वर्ग, वृत्त, π

How to cite this paper: Dinesh Mohan Joshi | Girishbhat B "π Evolution of in India" Published in International Journal of Trend in Scientific Research and Development (ijtsrd), ISSN: 2456-6470, Volume-6 | Issue-5, August 2022, pp.1194-1201, URL: www.ijtsrd.com/papers/ijtsrd50621.pdf

IJTSRD50621

Copyright © 2022 by author (s) and International Journal of Trend in Scientific Research and Development Journal. This is an Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License (CC BY 4.0) (http://creativecommons.org/licenses/by/4.0)

प्रस्तावना-

वृत्त परिधि और वृत्त व्यास के अनुपात को वर्तमान समय में π नाम से जाना जाता है जिसको हम निम्नलिखित समीकरण 1 से समझ सकते हैं । चित्र 1 में AC व्यास है । $ABCD$ वृत्त की परिधि है एवं OB व्यासार्ध है । समीकरण 1 में परिधि और व्यास के अनुपात को ही π की संज्ञा दी गई है जो इस प्रकार है -

$$\frac{\text{परिधि}}{\text{व्यास}} = \frac{c}{d} = \pi \qquad (1)$$

परिधि-व्यास के अनुपात के नामकरण π (पाई) का श्रेय वेल्श (Welsh) गणितज्ञ वीलियम जोन्स (William Jones) को जाता है । इन्होंने वृत्त की परिधि एवं इसके व्यास के अनुपात की संज्ञा π सन् 1706 में दी थी । π को प्रसिद्धि दिलाने में लियोनहर्ड इयूलर (Leonhard Euler) का बहुत बडा योगदान है । इन्होंने इसको सन् 1737 में विस्तार दिया । हम अपने इस लेख में वृत्त की परिधि और इसके व्यास के अनुपात के सम्बन्ध में विस्तार से चर्चा करेंगे एवं विभिन्न ग्रन्थों में इसके भिन्न भिन्न मानों पर प्रकाश डालेंगे । हम इस लेख में परिधि व्यास के अनुपात को π से सम्बोधित करेंगे एवञ्च कालक्रमानुसार हमारे आचार्यों द्वारा दिये गये π मान को संक्षिप्त रूप से कतिपय महत्वपूर्ण प्रमाणों के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास करेंगे ।

इतिहासकारों एवं प्राचीन गणितज्ञों ने वृत्त के परिधि-व्यास के अनुपात के मान को साधन करने की प्रक्रिया के प्रयासों को जानने का प्रयास किया ।[1] उन्होंने पाया कि प्राचीन इजिप्ट (Egypt) एवं बैबिलोन (Babylon) में परिधि-व्यास अनुपात का मान 3.1604 और 3.125 है । उस समय में लोग स्थूल रूप से 3 को ही π का मान मानते थे । भारत में भी प्रायः सभी सैद्धान्तिक ग्रन्थों में π मान 3 के आसन्न ही प्राप्त होता है ।

[1]Gow, J. A Short History of Greek Mathematics, Cambridge, p. 127, 1884; Smith , D. E. History of Mathematics, 2, p. 270, Dover Publication; Neugebauer, O. The exact Science in Antiquity, Princeton University Press, p. 46, 53, 1952.

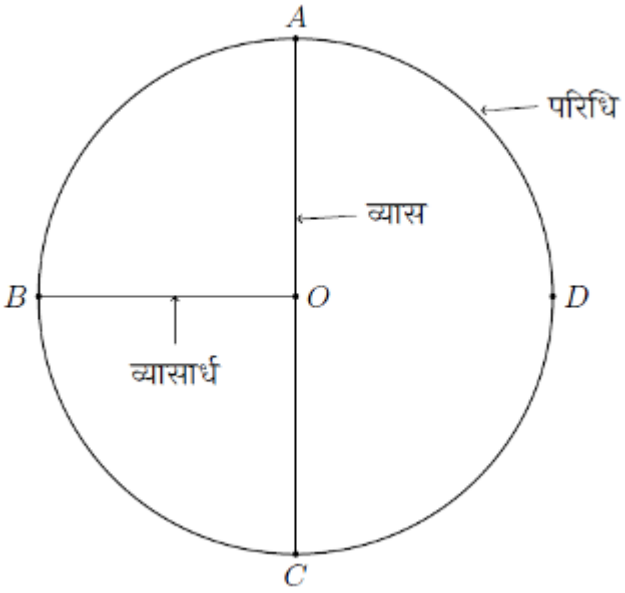

Figure 1: परिधि-व्यास सम्बन्ध

भारतीय परम्परा में याग इत्यादि का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान युगों युगों से रहा है और वेदी के अभाव में किसी याग की कल्पना करना निरर्थक है । वेदीनिर्माण करने के लिये एक निश्चित प्रकार के क्षेत्रफल का निर्धारण किया जाता है । कई वेदियां वर्गाकार हैं, कई आयताकार एवं कई वृत्ताकार, इसके प्रमाण हमें शुल्बसूत्रों में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं । किसी भी वृत्त की परिकल्पना हम π के अभाव में कर ही नहीं सकते अतः यह सिद्ध होता है कि शुल्बकारों को π के मान का ज्ञान बहुत पहले से था तभी वह वृत्त इत्यादि की आकृतियां का निर्माण कर पाते थे । प्रायः सभी शुल्बसूत्रों जैसे बौधायन, आपस्तम्ब, कात्यायन एवं मानवशुल्बशसूत्रों में भिन्न प्रकार की आकृतियों की वेदियों के निर्माण की चर्चा की गई है ।

वेद के छः अङ्ग हैं जिसमें कल्प का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है । कल्प के अन्तर्गत श्रौत, गृह्य, धर्म एवं शुल्बसूत्र आते हैं । शुल्ब का सम्बन्ध वेदी निर्माण से सम्बन्धित विधियों एवं नियमों से है । शुल्बसूत्र का सटीक अर्थ समझने के लिये शुल्ब और सूत्र को पृथक् पृथक् समझना बहुत आवश्यक है । वस्तुतः शुल्ब और सूत्र इन दोनों से रज्जु का ही बोध होता है फिर भी दोनों समानार्थक शब्दों का एक स्थान में प्रयोग किसी विशेष अर्थ को द्योतित करता है । हम क्रमशः शुल्ब एवं सूत्र के भाव को समझने का प्रयास यहां करेगें ।

शुल्ब शब्द कई अर्थों को द्योतित करता है । धातुवृत्ति[2] के अनुसार शुल्ब धातु मान अर्थ में प्रयुक्त होती है । कात्यायन शुल्बसूत्र[3] की टीका में विद्याधरशर्मा ने भी मान अर्थ में ही "शुल्ब माने । शुल्बनं शुल्बः" प्रयोग किया है । अर्थात् जिससे मापन किया जाये । शुल्बसूत्रों में मापन के लिये रज्जु एवं दण्ड का उपयोग किया गया है । अब सूत्रशब्द का अर्थ करना भी अनिवार्य है । हम पहले भी बता चुके हैं कि सूत्रशब्द भी शुल्ब का पर्यायवाची है क्यूंकि माधवीय धातुवृत्ति में सूत्र शब्द का प्रयोग वेष्टन एवं ग्रथन के अर्थों में प्रयुक्त हुआ है । ग्रथन से अर्थ संक्षिप्त वाक्य से है । मनीषियों ने सूत्र का लक्षण इस प्रकार किया है-

स्वल्पाक्षरमसन्दिग्धं सारवद्विश्वतोमुखम् ।
अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः ॥[4]

संस्कृत साहित्य में जहां भी सूत्र शब्द का प्रयोग होता है उसका अभिप्राय संक्षिप्तता से है । अन्ततः शुल्बसूत्रों से अभिप्राय वेदियों एवं यज्ञकुण्डों के मापन एवं निर्माण का सहायक ग्रन्थ । वर्तमान में बौधायन, आपस्तम्ब, कात्यायन, मानव, मैत्रायण, वारह एवं वाधूल शुल्बसूत्र हमें उपलब्ध होते हैं । बौधायन शुल्बसूत्र सबसे प्राचीन माना जाता है, इतिहासकार इसका समय 800 ईसा पूर्व मानते हैं । इन सब में बौधायन, आपस्तम्ब, कात्यायन एवं मानव शुल्बसूत्र बहुत प्रसिद्ध हैं ।

हम पहले भी बता चुके हैं कि शुल्बसूत्रों का मुख्य उद्देश्य विविध प्रकार की वेदी निर्माण से है । इन वेदियों के निर्माण के लिये वर्ग, आयत, वृत्त, त्रिभुज, द्विसम चतुर्भुज (isosceles trapezium), त्रिसम चतुर्भुज (equitrilateral trapezium), विषम चतुर्भुज (quadrilateral of unequal sides) इत्यादि का ज्ञान अत्यावश्यक है । इसमें शुल्बकारों ने विविध आयाम की वेदियों की निर्माण प्रक्रिया का वर्णन किया है । इसके साथ साथ वर्ग का वृत्त में परिवर्तन, वृत्त का वर्ग में परिवर्तन, आयत का वर्ग में, वर्ग का आयत में, कोटि-कर्ण न्याय इत्यादि विषयों पर गणितीय चर्चा विस्तार से की है ।

शुल्बसूत्रों में $\sqrt{2}$ का मान

π के मान के सन्दर्भ में शुल्बकारों ने $\sqrt{2}$ का मान प्राप्त किया एवं इसका प्रयोग वृत्त के व्यासार्ध को सिद्ध करने के लिये किया गया । प्रायः सभी शुल्बकारों ने $\sqrt{2}$ की परिभाषा एक ही प्रकार से दी है-

समचतुरस्रस्याक्ष्णया रज्जुर्द्विकरणी ।[5]
वर्ग की अक्षण्यारज्जु द्विकरणी होती है ।

समचतुरस्र अर्थात् वर्ग की भुजा का मान एक मान लेने पर उसके कर्ण का मान $\sqrt{2}$ होगा । बौधायन एवं कात्यायन शुल्बसूत्र में $\sqrt{2}$ का मान इस प्रकार बताया गया है-

---

[2] पृ. 545: भारतीयप्रकाशनम्, वाराणसी, 1964.

[3] कात्यायनशुल्बसूत्र. 7. 39.

[4] ब्रह्मसूत्रमध्वभाष्यम्, 1. 11 प्रस्तावना पृ. 3; शक 1805, ई. बम्बई; न्यायकोशः पृ. 1030, शक. 1850, पूना ।

[5]कात्यायनशुल्बसूत्र, 2.12.

प्रमाणं तृतीयेन वर्धयेत्तच्च चतुर्थेनात्मचतुस्त्रिंशोनेन ।[6]

(वर्ग की) प्रमाण भुजा की लम्बाई की (इसके) एक तिहाई से वृद्धि करें और इसमे इसका (एक तिहाई भाग का) चौथाई भाग $\frac{1}{34}$ दें और इसका भाग व्यवकलिता करें ।

यह सूत्र $\sqrt{2}$ की व्याख्या करता है । इसी प्रकार अग्रिम सूत्र भी $\sqrt{2}$ को परिभाषित करता है-

करणीं तृतीयेन वर्धयेत्तच्च चतुर्थेनात्मचतुस्त्रिंशोनेन । सविशेषः ।[7]

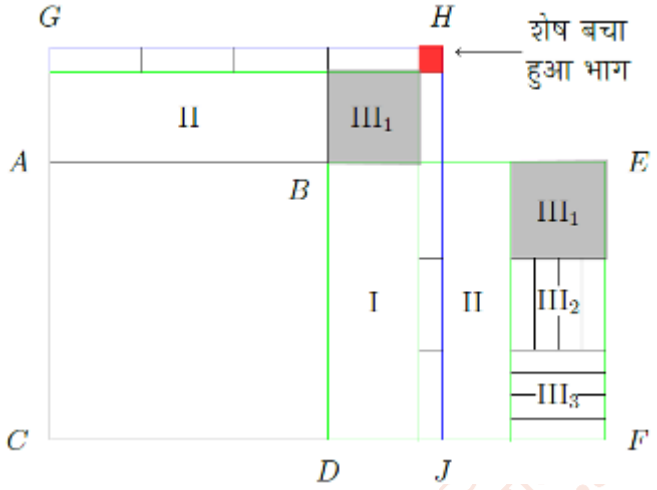

Figure 2: $\sqrt{2}$ साधन प्रक्रिया

$$\sqrt{2} = 1 + \frac{1}{3} + \frac{1}{3.4} - \frac{1}{3.4.34} = \frac{577}{408} = 1.4142156 \quad (2)$$

$\sqrt{2}$ का मान 5 दशमलव तक सही है । इसको हम प्रमाणों से सिद्ध कर सकते हैं ।

चित्र 2 में $ABCD$ एक वर्ग है । इस वर्ग के साथ हमने एक और वर्ग $BDEF$ बनाया । वर्ग $BDEF$ को बराबर तीन भागों में आयत में विभाजित करके क्रमशः उनको I, II एवं III नाम दिये । आयत III को पुनः समान तीन भागों में विभाजित किया जिनको क्रमशः III_1, III_2 एवं III_3 नाम दिये । पुनः III_2 एवं III_3 को चार चार समान भागों में बांटा । भाग I को हमने BD के दाईं तरफ लगा दिया । भाग II को AB के ऊपर लगा दिया । भाग III_1, II जहां लगाया है उसके दाईं तरफ लगा दिया । III_2 के चारों भागों को I के दाईं तरफ एक एक करके लगा दें । III_3 के चारों भागों को आयत II जहां लगाया है उसके ऊपर लगा दें ।

एसा करने पर हम पाते हैं कि दायें कोने H के पास एक छोटा सा भाग किसी भी भाग के अन्तर्गत नहीं आता है । एसा भाग हमेशा शेष रहेगा ही, इसका मान न्यूनातिन्यून हो सकता है परन्तु शून्य कभी नहीं हो सकता । चित्र 2 से के माध्यम से ऊपर दिया गया सारा विवरण स्पष्ट हो जायेगा ।

[6]बौधायनशुल्बसूत्र, 1.61.

[7]कात्यायनशुल्बसूत्र, 2.13.

शुल्बसूत्रों में वर्ग को वृत्त में एवं वृत्त को वर्ग में परिवर्तित करने के सन्दर्भ में π का मान सिद्ध किया गया है । नीचे हम दोनों ही परिस्थितियों में π का मान प्रमाणसहित दर्शायेंगे । वृत्त को वर्ग में अथवा वर्ग को वृत्त में परिवर्तन करने का मुख्य कारण वेदी निर्माण ही था । ऋग्वेद में मुख्य रूप से गार्हपत्य, आहवनीय एवं दक्षिण वेदियों की चर्चा की गई है । इनका निर्माण इस प्रकार से किया जाता था कि चाहे वेदी किसी भी आकार (वर्ग, वृत्त, अर्धवृत्त इत्यादि) की हो परन्तु उनका क्षेत्रफल समान होना चाहिये ।

वर्ग को वृत्त में परिवर्तित करने की विधि

वर्ग को वृत्त में परिवर्तित करने की विधि की चर्चा विशेषरूप से बौधायन, आपस्तम्ब एवं कात्यायन शुल्बसूत्रों में की गई है जो इस प्रकार है -

चतुरस्रं मण्डलं चिकीर्षन्नक्ष्णयार्धं मध्यात् प्राचीमभ्यापातयेद्यदतिशिष्यते तस्य सह तृतीयेन मण्डलं परिलिखेत् ।[8] वर्ग का (समक्षेत्र) वृत्त खींचना हो तो अक्ष्णया की आधी लम्बाई जितनी (लम्बी) रस्सी (वर्ग के) मध्यबिन्दु से प्राची रेखा पर रखें और (रस्सी का) जो भाग (पार्श्वमानी के) बाहर आता है उसके एक तिहाई भाग के साथ (इस त्रिज्या से) वृत्त निकालें ।

चतुरस्रं मण्डलं चिकीर्षन् मध्यात् कोट्यां निपातयेत् । पार्श्वतः परिकृष्यातिशयतृतीयेन सह मण्डलं परिलिखेत् । सानित्या[9] **मण्डलम् । यावत् हीयते तावदागन्तु ।**[10]

वर्ग का (समक्षेत्र) मण्डल खींचने का हो तो मध्यबिन्दु से आधा कर्ण खींचे । वह पार्श्वमानी के (मध्य पर) लाकर इसका जो भाग (पृष्ठ्या के) बाहर आता है इसके एक तिहाई भाग के साथ मण्डल खींचे । इससे समक्षेत्र मण्डल स्थूलमान का (सूक्ष्ममान का ?) प्राप्त होता है । जिस प्रमाण से क्षेत्रफल (वर्ग के सिरे के पास) कम होता है इस प्रमाण में वह पार्श्व भाग में अधिक होता है ।

चतुरस्रं मण्डलं चिकर्षोन्मध्यादंसे निपात्य पार्श्वतः परिलिख्य तत्र यदतिरिक्त भवति तस्य तृतीयेन सह परिलिखेत् स समाधिः ।[11]

वर्ग का (समक्षेत्र) वृत्त खींचने का हो तो मध्य से अंस तक की दूरी पार्श्वमानी के मध्य पर लाकर वहां (इस दूरी का) जितना भाग (पार्श्वमानी के) बाहर

[8]बौधायनशुल्बसूत्र, 1.58.

[9]सा नित्या

[10]आपस्तम्बशुल्बसूत्र, 3.2.

[11]कात्यायनशुल्बसूत्र, 3.13.

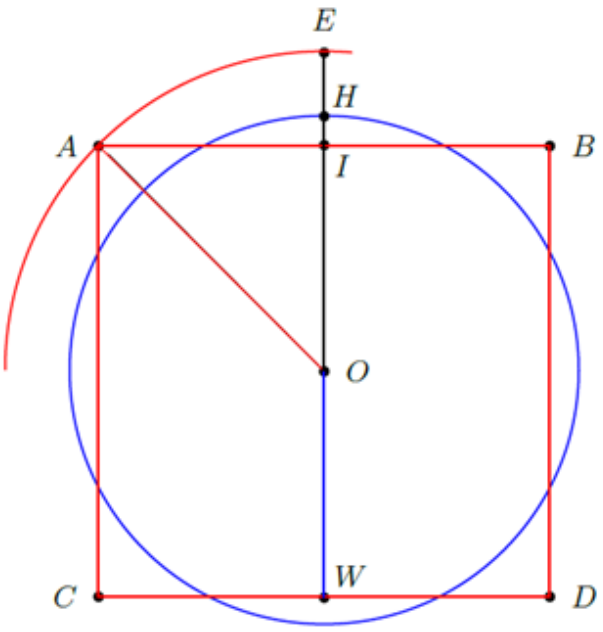

Figure 3: वर्ग से वृत्त निर्माण विधि

रहता है इसके एक तिहाई भाग के साथ वृत्त खींचें । यह विन्यास की पद्धति है ।

अक्षण्यार्ध से अभिप्राय आधे कर्ण से है । शेष स्पष्ट है । चित्र 3 में $ABCD$ एक वर्ग है जिसकी भुजा का मान $2a$ लिया गया है । अक्षण्यार्ध √2a है जो कि OA है | OA को अर्धव्यास मान कर एक वृत्त का निर्माण किया जो कि बिन्दु E को स्पर्श करता है । अतः OA = OE. हमें यहां EI का मान चाहिये जो कि $OE - OI$ अर्थात्

EI = √2a - a = a(√2 - 1)

होता है । EI को बराबर तीन भागों में बांटा जो कि

$$IH = \frac{EI}{3} = \frac{a(\sqrt{2}-1)}{3}$$

$$\begin{aligned} r = OH = OI + IH &= a + \frac{a(\sqrt{2}-1)}{3} \\ &= a\left[1 + \frac{1}{3}(\sqrt{2}-1)\right] \\ &= \frac{a}{3}(2+\sqrt{2}) \qquad (3) \\ &= \frac{a}{3}(2+1.4142156) \\ r &= a \times \frac{3.4141256}{3} = a \times 1.1380718 \qquad (4) \end{aligned}$$

समीकरण 2 का मान समीकरण 3 में रखने पर r का मान प्राप्त होता है जिसका प्रयोग हम वृत्तक्षेत्रफल साधन में करते हैं । हमने वर्ग की भुजा का मान $2a$ स्वीकार किया है । वृत्त और वर्ग का क्षेत्रफल समान करने के लिये

$$\begin{aligned} \pi r^2 &= s^2 \\ \pi r^2 &= (2a)^2 \\ \pi a^2(1.138)^2 &= 4a^2 \\ \pi \approx \frac{4a^2}{a^2(1.138)^2} &\approx \frac{4}{1.295} \approx 3.08 \qquad (5) \end{aligned}$$

शुल्बसूत्रभाष्यकार द्वारकानाथ ने ऊपर दिये गये π के मान को सूक्ष्म करने के लिये से समीकरण 3 को गुणा किया।

समीकरण 6 का मान समीकरण 7 में रखने पर

$$\begin{aligned} r &= \left[\frac{a}{3}(2+\sqrt{2})\right]\left[1 - \frac{1}{118}\right] \\ &= \left[\frac{a}{3}(2+\sqrt{2})\right]\left[\frac{117}{118}\right] \\ &= \frac{a}{3}\left[2 + \frac{577}{408}\right]\left[\frac{117}{118}\right] \\ &= a \times \frac{162981}{144432} = 1.12842721834 \times a \qquad (6) \end{aligned}$$

$$\begin{aligned} \pi r^2 &= \text{वृत्त वृत्त का क्षेत्रफल} \qquad (7) \\ &= (1.1284272)^2 a^2 \\ &= \pi(1.27334790)a^2 \qquad (8) \end{aligned}$$

वृत्त का क्षेत्रफल प्राप्त हुआ । अब हमें वर्ग के क्षेत्रफल को वृत्त के क्षेत्रफल के तुल्य करना है अतः

$$\begin{aligned} 4a^2 &= \pi r^2 \\ 4a^2 &= \pi(1.27334790)a^2 \\ \pi &\approx \frac{4}{1.27334790} = 3.1413253 \qquad (9) \end{aligned}$$

इससे हमें π का मान मिला जोकि 3 दशमलव तक सही है । यह मान आर्यभट के π के मान के तुल्य ही है ।

वृत्त को वर्ग में परिवर्तित करने की विधि

वृत्त को वर्ग में परिवर्तित करने के सन्दर्भ में बौधायन, आपस्तम्ब शुल्बसूत्रों में विधियों का वर्णन किया गया है जो क्रमशः इस प्रकार हैं-

मण्डलं चतुरस्रं चिकीर्षन् विष्कम्भं पञ्चदशभागान् कृत्वा द्वावुद्धरेच्छेषः करणी ।[12]

वृत्त का (समक्षेत्र) वर्ग खींचने का हो तो (वृत्त के) व्यास का 15 भाग करें और दो भाग काटकर शेष लम्बाई (वर्ग की) करणो होती है ।

मण्डलं चतुरस्रं चिकीर्षन् विष्कम्भं पञ्चदशभागान् कृत्वा द्वावुद्धरेत् ।[13] **त्रयोदशावशिष्यन्ते ।**[14] **साऽनित्या चतुरस्रम् ।**[15]

मण्डल का (समक्षेत्र) वर्ग करने का हो तो मण्डल के व्यास के 15 (सम) भाग करें और उनमें से दो भाग घटाइये । तेरह भाग रहते हैं । (इस लम्बाई का) वर्ग स्थूलमान से (मण्डल का समक्षेत्र होता है) ।

[12]कात्यायनशुल्बसूत्र. 3.14.

[13]आपस्तम्बशुल्बसूत्र, 3.6.

[14]आपस्तम्बशुल्बसूत्र, 3.7.

[15]आपस्तम्बशुल्बसूत्र, 3.8.

अपि वा पञ्चदश भागान् कृत्वा द्वावुद्धरेत् सैषाऽनित्या चतुरस्रकरणी ।[16]

अथवा (वृत्त के व्यास के) 15 भाग करें और इनमें से दो भाग घटाकर (शेष लम्बाई समक्षेत्र) वर्ग की, स्थूलमान से, भुजा (की लम्बाई) होती है ।[17]

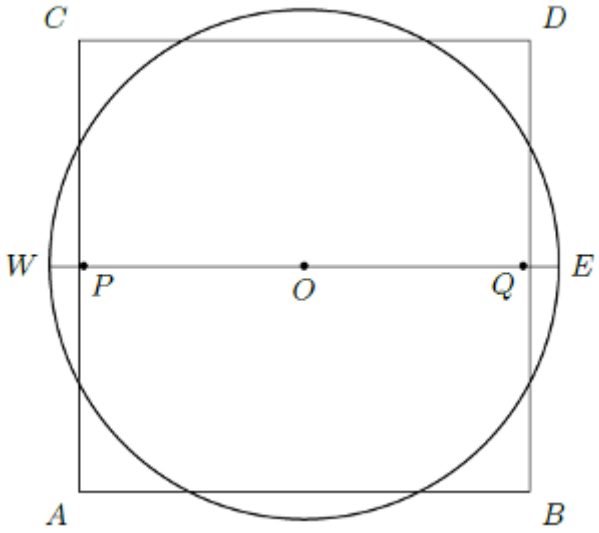

Figure 4: वृत्त से वर्ग निर्माण विधि

सूत्र में "करणी" शब्द भुजावाचक है । यहां पर वृत्त व्यास को 15 भागों में बांटने के निर्देश दिये गये हैं । एवं इसके 2 भागों को घटाने पर वर्ग की भुजा होगी । नीचे दिये गये चित्र 4 के अनुसार $ABCD$ वर्ग की भुजा $2a$ है एवं d वृत्त का व्यास (WE) है । बौधायन शुल्बसूत्र में प्रतिपादित नियमानुसार

d को $2r$ से स्थानान्तरित करने से

$$2a = d - \frac{2}{15}d \qquad (10)$$

हमें यहां वर्ग एवं वृत्त के क्षेत्रफल में समानता दिखानी होगी । अतः

$$a = \frac{13}{15}r = 0.87978r \qquad (11)$$

$$4a^2 = \pi r^2 \qquad (12)$$

समीकरण 11 का मान समीकरण 12 में स्थापित करने से

$4 \times 0.87978^2 r^2 = \pi r^2$

इससे π का मान 3.09 प्राप्त हुआ । शुल्बसूत्र भाष्यकार सुन्दरराज ने

$$\pi \approx 4 \times 0.7740128484 = 3.09 \qquad (13)$$

इस शोधकाङ्क को समीकरण 10 में जोडने पर π का मान 3.1415124 प्राप्त किया जो कि तीन दशमलव तक सही है । बौधायन ने π के मान के लिये और भी सूत्रों की चर्चा की है परन्तु विषय विस्तार के भय से उनकी चर्चा यहां अपेक्षित नहीं है।

$$\frac{3 \times 13}{15 \times 133} 2r \quad \text{(शोधकाङ्क)}$$

जैनों के ग्रन्थ सूर्यप्रज्ञप्ति एवं इसके पूर्व के ग्रन्थ ज्योतिषकरण्डक एवं जम्बूद्वीपसमास में भी परिधि-व्यास अनुपात $\sqrt{10}$ दिया गया है । जैन गणितज्ञ वीरसेन ने षट्खण्डागम की टीका धवला में परिधि-व्यास के अनुपात को इस प्रकार स्पष्ट किया है-

व्यासं षोडशगुणितं षोडशसहितं त्रिरूपैर्भक्तम् ।
व्यासं त्रिगुणितं सूक्ष्मादपि तद्धवेत् सूक्ष्मम् ॥[18]

अर्थात् जब 16 गुणित व्यास में 16 जोड दिये जायें एवं 113 से भाग दे दिया जाये एवं पुनः त्रिगुणित व्यास को जोडने पर (परिधि) सूक्ष्म होती है ।

$$\frac{16d + 16}{113} + 3d \approx \frac{355}{113} \approx 3.1415 \qquad (14)$$

इनके बाद वाले आचार्यों जैसे वराहमिहिर (505 A. D), उमास्वाति (2-5वीं शताब्दी) ब्रह्मगुप्त (628 A. D) श्रीधर (900 A. D) इत्यादि ने भी π का मान $\sqrt{10}$ ही स्वीकार किया है ।

आर्यभट प्रथम ने 5वीं शताब्दी में π का मान अपने ग्रन्थ आर्यभटीय में इस प्रकार उद्धृत किया है-

चतुरधिकं शतमष्टगुणं द्वाषष्टिस्तथा सहस्राणाम् ।
अयुतद्वयविष्कम्भस्यासन्नो वृत्तपरिणाह ॥[19]

सौ में धन चार गुणित आठ को बासठ हजार में जोडें । यह मान लगभग उस वृत्त की परिधि होगी जिसका व्यास बीस हजार है ।

परिधि और व्यास के इस अनुपात को ही π की संज्ञा दी गई है । सूत्रानुसार

प्राप्त हुआ जो कि

$$\frac{\text{परिधि}}{\text{व्यास}} = \frac{c}{d} \approx \frac{[100 + 4]8 + 62000}{20000} \qquad (15)$$

$$\frac{62832}{20000} \approx 3.1416 \qquad (16)$$

$$\frac{c}{d} = \pi$$

[16]बौधायनशुल्बसूत्र, 1.60.

[17]शुल्बसूत्रों के सभी सूत्रों की हिन्दी व्याख्या डॉ. रघुनाथ पुरुषोत्तम कुलकर्णी जी के ग्रन्थ "चार शुल्बसूत्र" से ली गई है ।

[18]षट्खण्डागम, Vol. IV. पृ. 42.

[19] आर्यभटीय, गणितपाद श्लोक 10.

π के आसन्न है । समीकरण 15 में c परिधि एवं d व्यास है एवं है । इस श्लोक की विशेषता यह है कि आर्यभट ने आसन्न शब्द का प्रयोग लगभग (approximation) के सन्दर्भ में किया है । इससे यह सिद्ध होता है कि आर्यभट को परिधि और व्यास के अनुपात की अपिरमेयता (irrationality) के विषय में जानकारी थी । भास्कराचार्य के बाद नीलकण्ठ ही एसे गणितज्ञ हुये जिन्होंनें π की अपिरमेयता [irrationality] के विषय में चर्चा की । ``आसन्न'' शब्द की पुष्टि के लिये नीलकण्ठ सोमयाजी ने अपने आर्यभटीय भाष्य में तर्कों के साथ आर्यभट का समर्थन किया है –

येन मानेन मीयमानो व्यासः निरवयवः स्यात्, तेनैव मीयमानः परिधिः पुनः सावयव एव स्यात् । येन च मीयमानः परिधिः निरवयवः तेनैव मीयमानो व्यासोऽपि सावयव एव इति एकेनैव मानेन मीयमानयोः उभयोः क्वापि न निरवयत्वं स्यात् । महान्तम् अध्वानं गत्वापि अल्पावयवत्वम् एव लभ्यम् । निरवयत्वं तु क्वापि न लभ्यम् इति ।[20]

जिस भी इकाई से मापने से व्यास का मान निरवयव हो, उसी इकाई से परिधि सावयव होती है, जिस इकाई से परिधि का मान निरवयव होता है उसी इकाई से मापने पर व्यास सावयव होता है । एक ही इकाई से मापने पर दोनों व्यास एवं परिधि कभी भी निरवयव नहीं होंगे चाहे कुछ भी कर लो (इकाई को छोटी करने पर) फिर भी अंश का लघु अवयव रहेगा ही । निरवयव कभी भी नहीं होगा । यही इसका भाव है ।

आर्यभट का π का यह मान लल्ल (749 A. D) एवं भट्टोत्पल (966 A. D) को भी मान्य है । भास्कर द्वितीय (1150 A. D) ने लीलावती में π का मान इस प्रकार दिया है –

व्यासे भनन्दाग्निहते विभक्ते खबाणसूर्यैः परिधिः सुसूक्ष्मः ।
द्वाविंशतिघ्ने विहृतेऽथ शैलैः स्थूलोऽथवा स्याद्व्यवहारयोग्यः ॥[21]

उपर्युक्त श्लोक के अनुसार दो सूत्र प्राप्त होते हैं जोकि निम्नप्रकार से हैं-

$$\pi \approx \frac{D \times 3927}{1250} \quad (17)$$

$$\approx \frac{D \times 22}{7} \quad (18)$$

समीकरण 17 जो कि श्लोक की प्रथम पङ्क्ति से सम्बन्धित है उसमें परिधि-व्यास के अनुपात का सूक्ष्म मान दिया गया है । समीकरण 18 जो कि श्लोक की द्वितीय पङ्क्ति से सम्बन्धित है उसमें परिधि-व्यास के अनुपात का स्थूल मान बताया गया है । भास्कराचार्य जी इस द्वितीय मान को व्यवहारयोग्य बताते है । आर्यभट द्वितीय ने परिधि को 21600 एवं व्यास को 6876 माना है । गणेश दैवज्ञ (1550 A. D) एवं मुनीश्वर (1656 A. D) के अनुसार परिधि-व्यास के अनुपात का मान है ।

$$\pi \approx \frac{600}{191} \approx 3.1413612565 \quad (19)$$

केरल के प्रसिद्ध गणितज्ञ माधव (1340-1420 A. D) ने π का मान भूतसङ्ख्या में बताया है जिसको नीलकण्ठ जी ने आर्यभटीयभाष्य[22] में एवं शङ्कर वारियर ने लीलावती में उद्धृत किया है । यह मान 11 दशमलब तक सही है जो इस प्रकार है-

विबुधनेत्रगजाहिहुताशनत्रिगुणवेदभवारणबाहवः ।
नवनिखर्वमिते वृतिविस्तरे परिधिमानमिदं जगदुर्बुधाः ॥[23]

इससे

$$\pi \approx \frac{2827433388233}{9 \times 10^{11}} \approx 3.141592653592..... \quad (20)$$

सिद्ध होता है । लीलावती की व्याख्या क्रियाक्रमकरी में शङ्कर वारियर (1500-1560 AD) ने π मान निम्नलिखित प्रकार से बताया है-

वृत्तव्यासे हते नागवेदवह्न्यब्धिखेन्दुभिः ।
तिथ्यश्वविबुधैर्भक्ते सुसूक्ष्मः परिधिर्भवेत् ॥[24]

$$\pi \approx \frac{104348}{33215} \approx 3.1415926539211.....$$

$$\pi \approx \frac{315}{113} \approx 3.1415929..... \quad (21)$$

मान दिया है ।

केरलीय परम्परा के सिद्धहस्त गणितज्ञ एवं खगोलविद् पुतुमन सोमयाजी (1660-1740 A. D) ने अपने ग्रन्थ करणपद्धति में व्यासार्ध साधन विधि का उल्लेख किया है । व्यासार्ध प्राप्त हो जाने पर हम π का मान निकाल सकते हैं । पुतुमन सोमयाजी की व्यासार्ध साधन विधि इस प्रकार है-

---

[20] *Āryabhaiṭīya* of Aryabhaṭācārya with the *Mahābhāṣya* of Nīlakaṇṭha Somasutvan , ed . by Sāmbaśiva Śāstrī Trivandrun Sanskrit Series 101 , Trivandrum 1930 comm . on Part I, *Ganitapada* , p . 41-42 .

[21]लीलावती, लोक 199.

[22]गणितपाद, श्लोक 10, पृ. 42.

[23]शङ्कर बारियर की लीलावतीव्याख्या क्रियाक्रमकरी से श्लोक 199 की व्याख्या के सन्दर्भ में, पृ. 377.

[24]शङ्कर चारियर की लीलावतीव्याख्या क्रियाक्रमकरी से श्लोक 199 की व्याख्या के सन्दर्भ में, पृ. 377.

अनूननूत्वाननुन्ननित्यैः समाहताश्चक्रकलाविभक्ताः ।
चण्डांशुचन्द्राधमकुम्भिपालैः व्यासस्तदर्धं त्रिभमौर्विका स्यात् ॥[25]

कटपयादि पद्धति से "अनूननूत्वाननुन्ननित्य का मान 10000000000 हुआ । "चण्डांशुचन्द्राधम कुम्भिपाल" से भाव 31415926536 सङ्ख्या से है । जब 10000000000 को परिधिमान से गुणा किया जाये और 31415926536 भाग दिया जाये तो लब्धि व्यास है एवं इसका आधा व्यासार्ध है ।

$$\begin{aligned} \text{व्यासार्ध} &\approx \frac{1}{2} \times \left[\frac{10000000000 \times 21600}{31415926536} \right] \\ &\approx 3437.7467707737701 \approx 3437'44''48'''22'''' \end{aligned} \tag{22}$$

π का मान

$$\pi \approx \frac{31415926536}{10000000000} \approx 3.1415926536 \tag{23}$$

दिया है ।

शङ्करवर्मन् (1800-38 A. D) ने अपने ग्रन्थ सद्रत्नमाला मे π के मान को निम्नलिखित श्लोक में बताया है-

एवं चात्र परार्धविस्तृतिमहावृत्तस्य नाहोऽक्षरैः
स्याद् भद्राम्बुधिसिद्धजन्मगणितश्रद्धा स्म यद् भूपगीः ॥[26]

यहां परार्ध[27] विस्तृति से अभिप्राय 100000000000000000 व्यास से है, एवं "भद्राम्बुधिसिद्धजन्म गणितश्रद्धा स्म यद् भूपगीः" से अभिप्राय 314159265358979324 परिधि से है । इस प्रकार समीकरण 24 में वृत्त की परिधि और व्यास का अनुपात

$$\begin{aligned} \frac{c}{d} \approx \pi &\approx \frac{314159265358979324}{100000000000000000} \\ &\approx 3.1415926358979324 \end{aligned} \tag{24}$$

बताया गया है जो दशमलव 17 तक सही है ।

पाठकों की सुविधा के लिये कालक्रमानुसार निम्नलिखित तालिका 1 में शुल्बसूत्रों एवं सिद्धान्त ज्योतिषीय ग्रन्थों में दिये गये π के मानों को दिखाया गया है ।

ग्रन्थ	सन्दर्भ	π का मान
बौधायनशुल्बसूत्र	1.58	3.0883
आश्वलायनशुल्बसूत्र	3.2	3.0883
कात्यायनशुल्बसूत्र	3.13	3.0883
बौधायनशुल्बसूत्र	1.59	3.0885
सूर्यप्रज्ञप्ति	सूत्र 20	$\sqrt{10} = 3.16227$
भागवतीसूत्र	सूत्र 91	$\sqrt{10} = 3.16227$
जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति	सूत्र 3	$\sqrt{10} = 3.16227$
वृद्धवशिष्ठसिद्धान्त	अध्याय 1, श्लोक 52	$\sqrt{10} = 3.16227$
सोमसिद्धान्त	अध्याय 1, श्लोक 50	$\sqrt{10} = 3.16227$
सूर्यसिद्धान्त	अध्याय 1, श्लोक 59	$\sqrt{10} = 3.16227$
आर्यभटीय	गणितपाद, श्लोक 10	$\frac{3927}{1250} = 3.1416$
शिष्यधीवृद्धिध	अध्याय 1, 2, 4, 13	$\sqrt{10} = 3.16227$
ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त	अध्याय 21, श्लोक 15	$\sqrt{10} = 3.16227$
गणितसारसङ्ग्रह	अध्याय 7, श्लोक 60	$\sqrt{10} = 3.16227$
महासिद्धान्त	अध्याय 15, श्लोक 92, 94-95	$\frac{22}{7} = 3.14285$
महासिद्धान्त	अध्याय 16, श्लोक 36	$\frac{21600}{6876} = 3.14136$
लीलावती	श्लोक 40	$\frac{3927}{1250} = 3.1416$, $\frac{22}{7} = 3.14285$
सिद्धान्तशिरोमणि	चन्द्रग्रहणाधिकार, श्लोक 3	$\frac{3927}{1250} = 3.1416$, $\frac{22}{7} = 3.14285$

Table 1: विविध ग्रन्थों में π का मान

निष्कर्ष

भारत के सन्दर्भ में हमने π के इतिहास एवं इसके विभिन्न मानों को जानने का प्रयास किया । शुल्बसूत्रों से प्रारम्भ करके सिद्धान्त ग्रन्थों का अवलोकन करके हमने π के अविष्कार के मुख्य कारणों एवं इसकी कतिपय गणितीय प्रक्रियाओं को जाना । हम जानते हैं कि शुल्बसूत्रों की रचनाओं का मुख्य उद्देश्य वेदीनिर्माण करने के सम्बन्ध में प्रयुक्त होने वाले गणित से था । वेदियों के आकार भिन्न भिन्न प्रकार के होते थे जैसे- वर्गाकार, आयताकार, गोलाकार, अर्धगोलाकार इत्यादि । वृत्त को वर्ग, वर्ग को वृत्त, वर्ग को एवं आयत को वर्ग में परिवर्तित करने के अनेक उदाहरण शुल्बसूत्रों में उपलब्ध हैं । यह विशेष ध्यान रखा जाता था कि बेदी की किसी एक आकृति को दूसरी आकृति में परिवर्तित करते समय क्षेत्रफल समान रहना चाहिये । इसी समस्या के समाधान हेतु π का अविष्कार हुआ और हमने यथामति भारतीय परिपेक्ष्य में पाठकों के समक्ष सारे तथ्यों को रखने का प्रयास किया । हमने पाया कि समय के साथ साथ π का मान सूक्ष्म होता चला गया । वर्तमान में π का मान दशमलव सौ हज़ार तक प्राप्त किया जा चुका है । भविष्य में π के सन्दर्भ में पाश्चात्य एवं भारतीय मनीषियों के मतों का तुलनात्मक अध्ययन करने का हमारा विचार है ।

[25]करणपद्धति, अध्याय 6 श्लोक 7.

[26]सद्रत्नमाला, ज्याचापादिप्रकरणम् श्लोक 2b.

[27]परार्ध का अर्थ 10^{17} है ।

सन्दर्भग्रन्थ

[1] *Āryabhaṭīyaṃ* of Āryabhaṭa with the commentary *Bhaṭadīpikā* of Parameśvara, ed. by B. Kern, Leiden 1874 (repr. 1906, 1973.

[2] *Āryabhaṭīya* of Āryabhaṭa, ed. with tr. and notes by K. S. Shukla and K. V. Sarma, INSA, New Delhi 1976.

[3] *Āryabhaṭīya* of Āryabhaṭācārya with the *Mahābhāṣya* of Nīlakaṇṭha Somasutvan, Part I, *Gaṇitapāda*, ed. by Sāmbaśiva Śāstrī, Trivandrum Sanskrit Series 101, Trivandrum 1930.

[4] *Āryabhaṭīya* of Āryabhaṭācārya with the *Mahābhāṣya* of Nīlakaṇṭha Somasutvan, Part II, *Kālakriyāpāda*, ed. by Sāmbaśiva Śāstrī, Trivandrum Sanskrit Series 110, Trivandrum 1931.

[5] *Āryabhaṭīya* of Āryabhaṭācārya with the *Mahābhāṣya* of Nīlakaṇṭha Somasutvan, Part III, *Golapāda*, ed. by Śūranāḍ Kuñjan Pillai, Trivandrum Sanskrit Series 185, Trivandrum 1957.

[6] *Āryabhaṭīya* of Āryabhaṭa with the commentary of Bhāskara I and Someśvara, ed. by K. S. Shukla, INSA, New Delhi 1976.

[7] *Candracchāyāgaṇita* of Nīlakaṇṭha Somayājī, with auto- commentary, ed. and tr. by K. V. Sarma, VVRI, Hoshiarpur 1976.

[8] *Candravākyas* of Vararuci, C. Kunhan Raja, Adyar Library, Madras 1948.

[9] चार शुल्बसूत्र (बौधायन, मानव, आपस्तम्ब और कात्यायन शुल्बसूत्रों का मूल तथा हिन्दी अनुवाद), द्वारा डा. रघुनाथ पुरुषोत्तम कुलकर्णी, महर्षि सन्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन, 2000.

[10] *Karaṇapaddhati* of Putumana Somayājī, tr. with mathematical notes by Venketeswara Pai, K. Ramasubramanian, M.S. Sriramm and M. D. Srinivas, HBA, Delhi and Springer, London 2018.

[11] *Karaṇapaddhati* of Putumana Somayājī, ed. by K. Sāmbaśiva Śāstrī, Trivandrum 1937.

[12] *Līlāvatī* of Bhāskarācārya II, with a commentary *Kriyākramakarī* of Śaṅkara Vāriyar (only up to a portion of Kṣetravyavahāra), ed. By K. V. Sarma, Hosiarpur 1975.

[13] *Sadratnamālā* of Śaṅkaravarman, tr. by S. Madhavan, KSRI, Chennai 2011.

[14] The *Śulbasūtras* of *Baudhāyana*, *Āpastamba*, *Kātyāyana* and *Mānava*: Ed. and Tr. by S. N. Sen and A. K. Bag, Indian National Science Academy, New Delhi 1983.

[15] *Tantrasaṅgraha* of Nīlakaṇṭha Somayājī, with *Laghuvivṛti*, ed. by S. K. Pillai, Trivandrum 1958.428.

[16] *Tantrasaṅgraha* of Nīlakaṇṭha Somayājī, with *Yuktidīpikā* (for chapters I–IV) and *Laghuvivṛti* (for chapters V–VIII) of Śaṅkara Vārīyar ed. by K. V. Sarma, VVRI, Hoshiarpur 1977.

[17] *Tantrasaṅgraha* of *Nīlakaṇṭha Somayājī*, tr. by V. S. Nara-simhan, *Indian Journal History of Science*, INSA, New Delhi 1998–99.

[18] *Tantrasaṅgraha* of Nīlakaṇṭha Somayājī, tr. with mathematical notes by K. Ramasubramanian and M. S. Sriram, HBA, Delhi and Springer, London 2011.

[19] *Vākyakaraṇa* with the commentary by Sundararāja, ed. By T. S. Kuppanna Sastri and K. V. Sarma, KSRI, Madras, 1962.

[20] *Veṇvāroha* by Mādhava, ed. with Malayalam commentary of Acyuta Piṣāraṭi by K. V. Sarma, The Sanskrit College Committee, Tripunithura, Kerala 1956.